ARYAVART SHODH VIKASH PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 199-200
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-8, No.-II, Issues-IX YEAR- Dec-2017

पं0 दीन दयाल उपाध्याय : आर्थिक लोकतंत्र के प्रणेता

डॉ0 अखिलेश कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर – विभागाध्यक्ष– अर्थशास्त्र विभाग, मुरादाबाद (उ0प्र0), भारत

पं0 दीन दयाल उपाध्याय जी के आर्थिक लोकतंत्र पर चर्चा करने से पूर्व संक्षेप में हम पं0 दीन दयाल उपाध्याय जी के बारे में जान लेना आवश्यक समझते हैं। पं0 दीन दयाल जी का जन्म साधारण ब्राह्मण परिवार में उत्तर प्रदेश के ब्रज भूमि मथुरा के 'नगला चन्द्रभान' ग्राम में दिनांक 25 सितम्बर, 1916 को हुआ था। इनके पिता पं0 भगवती प्रसाद उपाध्याय जी व माता श्रीमती रामप्यारी थी। पं0 दीन दयाल की शिक्षा विषम परिस्थिति में हुई, वह सरस्वती पुत्र थे। उपाध्याय जी निष्कपट, चरित्रवान, प्रखर देश भक्त तथा लोक संग्रही होने के साथ–साथ सादे जीवन और उच्च विचार तथा सनातन राष्ट्र धर्मिता से सम्पन्न थे। उपाध्याय जी जैसा नाम वैसा गुण को साकार करने वाले माँ भारती के सपूत थे; उन्होंने छात्र जीवन में ही अपनी मौलिक चिंतन की प्रतिभा से यह आभास करा दिया था कि वे सांसारिक सुख–सुविधापूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए नहीं अपितु उनका जीवन एक महान उद्देश्य के लिए है इसीलिए वे उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद भी कोई नौकरी पाने के लिए उन्मुख नहीं दिखे और अपना जीवन सार्वजनिक कार्य करने में लगा दिये।

उपाध्याय जी की मान्यता थी कि आर्थिक योजनाओं तथा आर्थिक प्रगति की माप समाज के ऊपर की सीढ़ी पर पहुंचे व्यक्ति से नहीं, बल्कि सबसे निचले स्तर पर विद्यमान व्यक्ति से होनी चाहिए। देश में ऐसे करोड़ों लोग है जो शासन के द्वारा संचालित कल्याणकारी योजनाओं और नीतियों तथा प्रशासनिक व्यवस्थाओं के अन्तर्गत नहीं आ पाते। हमारी भावना है कि मैले–कुचैले और अनपढ़ लोग ही हमारे नरायण है, जिस दिन इनको पक्के और सुन्दर घर बनाकर देंगे, इनके बच्चों और स्त्रियों को शिक्षा और जीवनदर्शन का ज्ञान देंगे, इनके हाथ और पांव की बिवाइयों को भरेंगे और जिस दिन इन्हें उद्योग–ध न्धों की शिक्षा देकर इनकी आय ऊँचा उठा देंगे उस दिन हमारा भ्रातृत्व व्यक्त होगा।

पं0 दीन दयाल उपाध्याय जी राज्य शक्ति और अर्थव्यवस्था, दोनों के ही विकेन्द्रीकरण के पक्षधर थे, उन्होंने स्वदेशी और स्वावलम्बन पर निर्भर अर्थतन्त्र को विकसित करने पर बल दिया। उनका कथन था कि पश्चिम से उधार लिया गया भारी–भरकम औद्योगिक तन्त्र और उसकी प्राविधिकी हमारे देश की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों में समायोजित नहीं हो सकती है। दीन दयाल जी का मत था कि भारतीय समाज–संरचना के अन्तर्गत दस्तकारी के आधार पर गाँवों में चल रहे छोटे–छोटे कुटीर उद्योगों एवं धन्धों जैसे बढ़ई, लोहार, चर्मकार, स्वर्णकार, बुनकर, दर्जी, कुम्हार, तेली, चित्रकार आदि को सहयोग प्रदान करके विकसित किया जाये। कुटीर उद्योगों में हस्तकौशल और हस्तशिल्प को जो बहुत बड़ा क्षेत्र मिला है वह मशीन उद्योगों में बिल्कुल नहीं मिल पाता। पूंजीवाद और समाजवाद दोनों केन्द्रित अर्थनीति के ही परिणाम है। उपाध्याय जी बड़े उद्योगों के भी विरोधी नहीं थे, उनका मत था कि बड़े उद्योग उत्पादक वस्तुएं तैयार करें तथा छोटे उद्योग उपभोग में आने वाली वस्तुएं तैयार करें। दीन दयाल जी ने इस सन्दर्भ में जापान का उदाहरण दिया है जहाँ साइकिल इत्यादि के छोटे–छोटे पुर्जे घरों में बनते हैं और उनके संगठित एकीकरण का काम बड़े कारखानों में किया जाता है।

दीन दयाल जी की धारणा थी कि ग्रामोदय के बिना आर्थिक विकास समीचीन रीति से नहीं हो सकता है क्योंकि असली भारत तो गाँवों में ही बसता है। गाँव का श्रमिक और कृषक भारतीयता का प्रतीक है उसे काम करने का संवैधानिक अधिकार मिलना चाहिए हर बेरोजगार को उसकी क्षमता और योग्यता के अनुरूप काम का अवसर दिया जाना चाहिए। नियोजन की सारी नीतियाँ ग्रामोदय को ध्यान में रखकर बनायी जानी चाहिए। दीन दयाल जी ने ग्रामीण उद्योग धन्धों को चलाने के लिए छोटी मशीनों या लघु यन्त्रों के प्रयोग पर भी सहमति व्यक्त की है। ग्राम विकास के सन्दर्भ में उनके द्वारा प्रदत्त कुछ सुझाव इस प्रकार है :– हर गाँव या मजरे को यातायात के साधनों से जोड़ा जाय, ग्रामीण क्षेत्रों में क्षेत्रीय स्तर पर गल्ला मण्डियां, सब्जी मण्डियां और दूध प्लाण्ट स्थापित किये जाये, उनके संचालक मण्डलों में किसानों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जाय हर खेत को पानी देने के लिए जल संचयन हेतु तालाबों, बांधों को बनाया जाये जिनमें वर्षा का जल संचित किया जा सके। नदियों की बाढ़ के पानी का उपयोग नहरें बनाकर उनके माध्यम से किया जा सकता है। अधिकतम नलकूपों को लगवाया जाय। कृषि–उपकरणों और उन्नतशील बीजों को ग्रामीण स्तर पर ही सुलभ कराया जाय। छोटे और गरीब किसानों को साधारण किस्तों और सामान्य ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जाय। इन ऋणों पर किसी भी स्तर

अनुरूपी लेखक

पर कमीशन खोरी न हो इसका ध्यान रखा जाय। कृषकों को परम्परागत फसलों के उत्पादन के साथ ही सब्जियों, फलों और औषधियों के उत्पादन की दिशा में भी प्रेरित तथा प्रोत्साहित किया जाय और इनकी खपत के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में औषध ानिर्माणशालाओं की स्थापना हेतु प्रोत्साहन भी दिया जाय। पेय पदार्थों का निर्माण बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के स्थान पर स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से क्षेत्रीय कार्यशालाओं में ही कराया जाय। ग्रामवासियों को नौकरशाही की संवेदनहीनता और सर्वव्यापी भ्रष्टाचार से मुक्ति दिलाने का प्रयास करना होगा। केवल राजनीतिक लोकतंत्र ही पर्याप्त नहीं है, अपितु आर्थिक लोकतंत्र के लिए भी हमें जी–जान लगाकर संघर्ष करना होगा तभी देश के दरिद्रनरायण को सुखी एवं सम्पन्न जीवन जीने का अवसर प्राप्त हो सकेगा।

दीन दयाल जी की विचार प्रणाली एकांगी न होकर सर्वांगीण है उन्होंने इसे 'एकात्मवादी दर्शन' के रूप में प्रस्तुत किया है, वे व्यष्टि और समष्टि में विरोधाभास न देखकर पारस्परिक सहयोग और सामन्जस्यपूर्ण प्राकृतिक सम्बन्ध के पुरोवर्तक है, उनके चिन्तन के अनुसार व्यक्ति, परिवार, समुदाय, ग्राम–पंचायत, स्थानीय शासन, और राज्य के मध्य संघर्ष की स्थिति न होकर भाईचारे का सम्बन्ध होना चाहिए। दीन दयाल जी द्वारा प्रस्तुत 'एकात्म मानववाद' मूलतः ऋग्वेद के पुरुषसूक्त पर आधृत है जिसमें सम्पूर्ण समाज की परिकल्पना एक विराट पुरुष के रूप में की गयी है जिस पर व्यक्ति के समस्त अंग परस्पर सम्बद्ध रहकर उसे स्वस्थ और सुखी रखने के साथ सक्रिय बनाये रखते हैं सभी अंगों का पोषण मुखादि अव्यवों से गृहीत और उदरादि में परिपक्व एक ही अन्न से होता है। सब में एक ही रक्त का प्रवाह होता है उसी प्रकार समाज भी अपने विभिन्न वर्णों एवं वर्गों के माध्यम से गतिशील रहता है। शरीर के विभिन्न अंगों में जैसी परस्परानुकूलता रहती है वस्तुतः उसी प्रकार के सहयोग और सामंजस्य की सत्ता समाज–जीवन में भी अपेक्षित है। एकात्म मानववाद का दर्शन यह भी विचार संप्रेषित करता है कि मनुष्य केवल अर्थ–पुरुषार्थजन्य रोटी, कपड़ा और मकान को लेकर आनन्दित नहीं हो सकता इसके साथ ही उसके जीवन में धर्म, काम और मोक्ष संज्ञक पुरुषार्थों की अन्विति भी आवश्यक है। पं0 दीन दयाल जी का समग्र चिन्तन सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की परिधि में था। वह वैश्विक अर्थचिन्तन की केन्द्रीयकृत अर्थव्यवस्था को चाहे वह, पूंजीवादी हो या साम्यवादी, को शोषणकारी मानकर नकारती थे। वह रामकृष्ण परमहंस व विवेकानन्द जी के कथन को साकार करना चाहते थे। नर सेवा, नारायण सेवा तथा दरिद्रनरायण की सेवा में नारायण का दर्शन करना उनका स्वभाव था। आज वर्तमान समय में हम यह देख रहे हैं कि पं0 दीन दयाल के आर्थिक विचारों से प्रेरित होकर ही देश में लघु उद्योग, कुटीर उद्योग तथा अप्रशिक्षित वर्ग जैसे कुम्हार, लोहार, बढ़ई चर्मकार आदि अनेकों प्रकार के प्रतिभाओं को निखारने के लिए स्किल डेवलपमेंट कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जो पं0 दीन दयाल जी के आर्थिक लोकतंत्र का आधार है और उनकी दुरदर्शिता को प्रदर्शित करता है। अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि दीन दयाल जी के आदर्शों पर चलकर हम एक नये भारत का निर्माण कर सकते हैं जो आर्थिक रूप से सबल होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दैनिक समाचार पत्र दैनिक जागरण 25 सितम्बर 2016 वाराणसी–संस्करण।
2. राष्ट्रधर्म सितम्बर 2015, 2017।
3. ऋतम्भरा 2015–16।
4. उपाध्याय, दीनदयालः भारतीय अर्थनीति–विकास की एक दिशा, लोकहित प्रकाशन लखनऊ (1958)।
5. एकात्ममानव दर्शन सुरूचि प्रकाशन, नई दिल्ली (1976)।
6. राष्ट्र जीवन की दिशा लोकहित प्रकाशन, लखनऊ (1971)।
7. पांञ्चजन्य।

*****